महाराज भगीरथ की शिवाराधना

महाराज सगर के साठ हजार पुत्र कपिल मुनि की क्रोधाग्नि से भस्म हो गये थे। बहुत दिनों बाद सगर के वंश में समुत्पन्न राजर्षि दिलीप के पुत्र महाभाग भगीरथ ने 'गोकर्ण' तीर्थ में एक हजार वर्षतक कठिन तपस्या कर ब्रह्माजी को प्रसन्न किया। वे प्रसन्न होकर वर देने के लिये देवताओं को साथ लेकर महात्मा भगीरथ के पास आये और वर माँगने के लिये कहने लगे।

भगीरथ ने हाथ जोड़कर कहा–'भगवन्! मेरे पूर्वज इस समय न जाने किस दशा में पड़े हैं, उनका उद्धार करना मेरा परम कर्तव्य है। हे देव! आप ऐसा प्रयत्न कीजिये कि गङ्गाजी इस भूलोक में आकर अपने पावन जल से मेरे पूर्वजों का उद्धार करें।'

ब्रह्माजी ने कहा–'मैं गङ्गाजी को भूलोक में भेज दूँगा, पर उनके प्रवाह को रोकने की शक्ति पृथिवी में नहीं है। इसके लिये दयासिन्धु भगवान् शिव जबतक कृपा नहीं करेंगे, तबतक कार्य सिद्ध नहीं होगा। वे ही गङ्गाजी के प्रवाह के वेग को रोक सकते हैं। इसलिये हे भगीरथ! तुम उनकी आराधना करो।'

ब्रह्माजी के उपदेश के अनुसार भगीरथ ने शिवजी की आराधना प्रारम्भ कर दी। वे अन्न–जल का परित्याग कर पैर के एक अँगूठे पर खड़े होकर एक वर्षतक भगवान् शंकर का ध्यान करते रहे। उनकी अनन्य शरणागति से प्रसन्न होकर भगवान् उमापति प्रकट हुए और कहने लगे–'नरश्रेष्ठ! मैं तुम्हारी तपस्या से प्रसन्न हूँ और तुम्हारी कामनापूर्ति करने आया हूँ। मैं गिरिराजकुमारी गङ्गा को अपने मस्तक पर धारण कर तुम्हारा प्रिय कार्य करूँगा।'[1]

भगवती गङ्गा को अपने वेग का बड़ा गर्व था। इससे उन्होंने शिवजी को बहाते हुए पाताल में प्रवेश कर जाने का निश्चय किया और विशाल रूप धारण कर बड़े दुःसह वेग से भगवान् शिव के मस्तक पर गिरीं।

भगवान् शिव को उनके अभिमान का पता लग गया। इसलिये उन्होंने गङ्गाजी को अपने जटाजूट में ही बाँध रखने का निश्चय कर लिया। गङ्गाजी पूरे वेग से शिवजी की जटा पर गिरीं और उसी में समा गयीं। उन्होंने बड़ा प्रयत्न किया कि किसी प्रकार पृथिवी पर उतर जायँ, पर किसी तरह जटा–मण्डल से नहीं निकल सकीं। वहीं पर वे कई वर्षोंतक चक्कर लगाती रहीं।

भगीरथ को इस बात से बड़ा दुःख हुआ और वे पुनः शिवजी की आराधना करने लगे। शिवजी

---

1. **प्रीतस्तेऽहं नरश्रेष्ठ करिष्यामि तव प्रियम्।**
शिरसा धारयिष्यामि शैलराजसुतामहम्।। (वा. रामा. बालका. सर्ग 43/3)

ने भगीरथ की प्रार्थना पर गङ्गाजी को अपनी जटा से मुक्त कर दिया। उस समय गङ्गा की सात धाराएँ हो गयीं। ह्लादिनी, पावनी और नलिनी नाम की मङ्गलमयी तीन धाराएँ पूर्व दिशा की ओर बह पड़ीं। सुचक्षु, सीता और सिन्धु नाम की तीन धाराएँ पश्चिम दिशा को प्रवाहित हुईं और सातवीं धारा के रूप में पतितपावनी भगवती गङ्गा महाराज भगीरथ के रथ के पीछे चली। सुन्दर रथ पर बैठे हुए भगीरथ आगे-आगे जा रहे थे, पीछे-पीछे भागीरथी गङ्गा उनका अनुसरण कर रही थीं।

अनेक देवर्षि, गन्धर्व, यक्ष, सिद्ध आदि इस अद्भुत दृश्य को देखकर मुग्ध हो गये। देवता लोग भी आकर इस गङ्गावतरण के दृश्य को देखने लगे। भूतलवासी ऋषिगण उस जल को शिवजी के अङ्ग से निकलते देखकर बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ उसका स्पर्श कर परम आनन्द को प्राप्त हुए। गङ्गा की वह धारा भूलोक के प्राणियों का उद्धार करती हुई रसातलतक चली गयी और वहाँ पहुँचकर उसने भगीरथ के भस्मीभूत पितामहों का उद्धार किया। यह सब विलक्षण कार्य महाराज भगीरथ की शिव-भक्ति का ही परिणाम था। (वाल्मी. रामा. बालका. सर्ग 42-43)

(यह कथा गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित कल्याण के 'शिवोपासनांक' से ली गयी है। यह कथा वाल्मीकीय रामायण के उपर्युक्त सर्गों पर आधारित है।)

❀❀❀❀❀❀

भगवान् के नाम का महत्त्व

ब्रह्माजी नारदजी से कहते हैं कि उत्तम व्रत का पालन करनेवाले नारद! मेरा कथन सत्य है, सत्य है, सत्य है। भगवान् के नामों का उच्चारण करनेमात्र से मनुष्य बड़े-बड़े पापों से मुक्त हो जाता है। नाम-कीर्तनमात्र से व्यक्ति कुरुक्षेत्र, काशी, गया और द्वारका आदि सम्पूर्ण तीर्थों का सेवन कर लेता है।

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं भाषितं मम सुव्रत।।
नामोच्चारणमात्रेण महापापात्प्रमुच्यते।
कुरुक्षेत्रं तथा काशी गया वै द्वारिका तथा।।
सर्वं तीर्थं कृतं तेन नामोच्चारणमात्रतः।

(पद्ममहापु. उत्तरखण्ड 72/20, 22)